२० वाँ सुमन

...दों के चार सूक्त

(...प्ताहिक स्वाध्यायार्थ)

जिससे विबुध विरोध न करते; द्वेष न आपस में रखते।
वह वैदिक विज्ञान-ज्ञान घर-घर में मानवहित करते॥

लेखक—

रणछोड़दास 'उद्धव'

श्री रविधाम केन्द्र महिदपुर की समिति

१	श्री उद्धवजी—संचालक अ० भा० श्रीरविधाम	
२	,, दि. मा. पल्लेकरजी बी. ए. एल्. एल्. बी.	अध्यक्ष
३	,, जमनालालजी त्रिवेदी वकील सा.—	उपाध्यक्ष
४	,, स. ख. कर्णिक वकील सा —	,,
५	,, गोवर्धनलालजी मुखिया एडवोकेट—	,,
६	,, अरविंदकुमार गीते वेदपरिचित—	मंत्री
७	,, सुरेन्द्र उद्धव वेदपरिचित—	उपमंत्री
८	,, भैंरवलालजी रोकड़िया—	कोष ध्यक्ष
९	श्रीमती लीलाबाई नगदूले वेदपरिचित—	कार्यकर्त्री
१०	,, श्यामाबाई शर्मा वेदपरिचित—	,,
११	श्री देवीदासजी उथरा—	कार्यकर्ता
१२	,, मनोहर उद्धव—	,,

अ. भा. श्रीरविधाम-शाखा २ जेलरोड़ इन्दौर

अध्यक्षा—श्रीमती सुशीलादेवी चांगण

उपाध्यक्षा—श्रीमती संतोषकुमारी दीक्षित

मंत्राणी—श्रीमती सरोजिनी भाटे

कोषाध्यक्षा—श्रीमती भागीरथीबाई

प्रचारमंत्री—श्री भगीरथप्रसादजी दुबे

सदस्य —१ श्रीमती कमलाबाई तिवारी

,, —२ श्रीमती हंसाबाई लाभारी

सत्साहित्य-सुमन-माला २० वाँ सुमन

चारों वेदों के चार सूक्त

(साप्ताहिक स्वाध्यायार्थ)

जिससे विबुध विरोध न करते; द्वेष न आपस में रखते।
वह वैदिक विज्ञान-ज्ञान घर-घर में मानवहित करते ॥

लेखक—

रणछोड़दास 'उद्धव'

वेदतत्त्वान्वेषक; गीतालंकार; धर्मभूषण; साहित्यरत्न

संचालक-अखिल भारतीय श्री रविधाम केन्द्र महिदपुर (म. प्र.)

मूल्य
६० नये पैसे

प्रकाशक:—
हरिव्यासीबन्धु
श्री रणछोड़प्रकाशनमंदिर
महिदपुर (म. प्र.)

प्रथमा वृत्ति १०००

पोष शुक्ला १५ संवत् २०१८ वि०

मुद्रकः—
मैनेजर-भागीरथ दुबे
श्री म. भा. हि. सा.
समिति प्रेस, इन्दौर.

अनुक्रमणिका
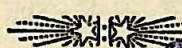
कृतज्ञतानिवेदन

प्रस्तुत पुस्तक-प्रकाशन की प्रेरणा मुझे त्यागमूर्ति श्रीमती श्रद्धेया श्यामा भाभी से प्राप्त हुई। आपने मेरे पूज्यवर आचार्य वेदार्थदर्शनकार, विद्याभूषण, धर्ममणि श्रीबालस्वामीजी के प्रदर्शित वेदमार्ग को अपनाया है एवं तदनुसार संस्कृतविशारद, वेद-परिचित, गीतालंकार और उपनिषद्-प्राज्ञ परीक्षाएँ इनकी सहेली प्रधानाध्यापिका श्रीमती लीलाबाई नगदूले के साथ-साथ दी हैं। आप श्रीरविधाम केन्द्र महिदपुर की कार्यकर्त्री हैं। वेदमहोत्सवों पर अतिथिसत्कार में इतनी तल्लीन रहती हैं कि योगी सत्यात्मा जैसे अतिथियों ने इन्हें 'वेदमाता' की पदवी प्रदान की है। यह श्रीमान् पद्मभूषण पं० सूर्यनारायणजी व्यास की भानजी हैं। इनको व्यासजी के घर के सब लोग बहुत मानते हैं। श्रीव्यासजी की माताजी एवं इनकी नानीजी स्व० माँ साहिबा के लिए मुझसे कहा कि आप माँ साहिबा को एक पुस्तक समर्पण करें, जिसमें माँ साहिबा के चित्र के साथ माँ सा. की ज्येष्ठा पुत्री सेवापरायणा श्री मेनाबाई सा. का चित्र भी रहे, तदनुसार यह पुस्तक प्रकाशित हो रही है।

श्री श्यामा भाभी ने वेदप्रचारकार्य में पूर्ण सहयोग प्रदान किया है अतएव इनके संबंधियों को मैं भी उसी रूप से मानता आया हूँ। श्रद्धेय श्री व्यासजी से वय में संभवतः मैं न्यून नहीं हूं, किन्तु उन्हें मामाजी ही कहता हूँ। इस नाते को घर के सब सज्जन भी निभाते हैं। उनकी कृपा एवं श्री श्यामा भाभी के दिव्य त्याग से मैं आजन्म उऋण नहीं हो सकता।

—लेखक

समर्पण

श्रीमान् पद्मभूषण पं० सूर्यनारायणजी व्यास की माताजी धर्मशिरोमणि, वात्सल्यमूर्ति स्व० माँ साहिबा की अमर आत्मा को सत्साहित्य-सुमनमाला का २० वाँ सुमन 'चारों वेदों के चार सूक्त' सादर समर्पित करता हूँ ।

वेदव्रती—
चद्दर

माँ साहिबा की ज्येष्ठा पुत्री, सेवापरायणा, कर्तव्यशीला
धर्ममूर्ति श्रीमती मेनाबाई साहिबा
बड़े गणेश उज्जैन (म. प्र.)

सत्साहित्यसुमनों पर सम्मतियाँ

महामहोदेशक समीक्षाचक्रवर्ती विद्यावाचस्पति पंडित श्री मधुसूदन ओझा के वैदिक विज्ञानप्रकाशनाध्यक्ष श्रीयुत पंडित प्रद्युम्न शर्मा ओझाजी की सम्मति।

श्रीयुत उद्धवजी, सस्नेह वन्दे।

आप का कृपा पत्र उद्देश-नियमावली के साथ......प्राप्त हुआ। बाँचकर बड़ी प्रसन्नता हुई। आप यह कार्य बड़े गौरव का कर रहे हैं तदर्थ धन्यवाद। वैदिक समाज को बड़ा सन्तोषप्रद होगा, भारत की बड़ी समुन्नति होगी।......मैं भी मुझ से जो हो सकेगा आप के इस कार्य में सेवा करूंगा।

जयपुर
२०।१२।५८

भवदीय
प्रद्युम्नशर्मा ओझा

पं. दयाशंकरजी वाजपेयी एम् ए., व्याकरण-साहित्याचार्य, ऋषिनिवास, माधवनगर, उज्जैन के महोदय की सम्मति ।

सन्तप्य वत्सरशतं बहुधा तपांसि
देहं यमैश्च नियमैरपि शोषयित्वा ।
निःश्वासतो भगवतः सहसा प्रसूतां
विद्यां पुराधिगतवान् चतुराननो याम् ॥ १ ॥

तस्याःकृते समपहाय समस्त सौख्या-
न्याश्रित्य काननभुवं तरुमूलसंस्थाः ।
जित्वा क्षुधं तृषमुदस्य तथा नियम्य
प्राणाँश्चिराय मुनयो ददृशुस्ततो याम् ॥ २ ॥

आदौ कलेः स्मृतिकलाविकलं विपश्चिद्—
वृन्दं विलोक्य करुणावरुणालयोऽसौ ।
व्यासः स्वयं स भगवानथ यां चतुर्धा
सम्भव्य शिष्यजनतोपकृतिं व्यधत्त ॥ ३ ॥

पाश्चात्यसंस्कृतिसमाकुलितेषु चैवं
लोकेषु संस्कृतपराङ्मुखतांगतेषु ।
तस्या गिरो न्विह गभीरतरार्थभाजो
बोधं विधातुमधनुा क्षम एव कः स्यात् ॥ ४ ॥

तस्माद् विचिन्त्य सफलोपकृतिप्रयोगं
भाषानुवादकवितासवितानमेतम् ।

प्रस्ताव्य यैः सुरगिरां विहित प्रचार—
स्ते ऽध्यात्मदर्शनजुषो विबुधा जयन्ति ॥ ४ ॥

विज्ञानमद्य निहितं सकलेषु वेद—
मन्त्रेषु तन्त्रसहिता विविधाश्च विद्याः ।

गीर्वाणवाक् परिचयं परिहृत्य कश्चित्
तद्वेदितुं न हि जनस्तनुते मनीषाम् ॥ ६ ॥

श्लाघ्यस्तदत्र सुमहानयमुद्धवस्य
विज्ञस्य लोकहितभावनया प्रयत्नः ।

आचन्द्रतारकमनारतमात्मबोध—
लिप्सोर्जनस्य मुदमातनुतां प्रकामम् ॥ ७ ॥

एतां सप्रयासं सधैर्यं साग्रहं सम्पादितां ग्रन्थ-मालामालोक्य सहृदयानामयते मनोमुदां परमास्पदताम् । को हि विज्ञो विज्ञानस्य प्रसिद्धं निधानं सन्निधानमधिष्ठितमधिगत्य हर्षप्रकर्षं नासादयेत् । तदेषा स्रगजस्रमाश्रयेदुत्कर्षमिति समाशास्ते विदुषामाश्रवः ।

दि० ३।८।५६

दयाशंकर वाजपेयी
उज्जयिनी

श्रीयुत वासुदेवशरणजी अग्रवाल एम. ए. डी. लिट्, कला व स्थापत्यविभागप्रमुख, काशीविश्वविद्यालय के महोदय की सम्मत्ति ।

प्रिय महोदय,

आपका पत्र और साहित्य मिला। परिचय पाकर प्रसन्नता हुई। वैदिकधर्म और संस्कृति के प्रचार के लिये आपका प्रयत्न जानकर आनन्द हुआ।

अपने साहित्य का एक सेट पंडित मोतीलालजी की सेवा में भी प्रेषित करने की कृपा करें।

काशी विश्वविद्यालय }
१८-५-६० }

भवदीय
वासुदेव शरण

मानसतत्वान्वेषी पं. श्रीरामकुमारदासजी रामायणी, वेदान्त-भूषण, साहित्तरत्न, श्रीरामग्रन्थागार मणिपर्वत श्री अयोध्याजी की सम्मति।

जै श्रीसीताराम !

गोस्वामी श्री तुलसीदासजी का श्री रामचरितमानस के समान ही एक अनुपम ग्रन्थरत्न विनय पत्रिका भी है, जिसका दूसरा पद सूर्यस्तवन है। जिसकी कुछ पंक्तियाँ—

.... दहन दोष-दुख-दुरित-रुजाली।
.... तेज–प्रताप–रूप–रस–राशी।
... ... विधि-शंकर-हरि-मूरतिस्वामी।
वेद-पुराणविदित यश जागै।".... ... .

हैं । इन पंक्तियों में वही वैज्ञानिक तत्व निहित है, जिन्हें आप "ईशविज्ञानसुधा" आदि ग्रन्थरत्नों द्वारा वेदविज्ञानरहित प्रेमियों-तत्वबुभुत्सुओं के लिये सरल राष्ट्रभाषा में उपस्थित करके राष्ट्रभाषा का भण्डार तो वैज्ञानिक निधियों से भरते ही हैं, मानसप्रेमियों का भी महान् उपकार करते हैं । यदि मानस की—

"जिमि कोटि शत खद्योत रविसम कहत अति लघुता लहै ।"

इस पंक्ति को समझने के लिए तुलसी के विद्यार्थियों को रविधाम द्वारा प्रकाशित सत्साहित्यसुमन परम सहायक सिद्ध होंगे, रामायणी वर्ग चाहें तो ।

मैं तो आपके अन्वेषण, लग्न और इस वृद्धावस्था में भी कार्य-क्षमता पर मुग्ध हूँ । हृदय के समस्त भाव को यदि लिखने लगूँ तो शायद चापलूसी का अपराधी माना जाने लगूँ ।

दि. १७-३-६१

भावत्कः
रामकुमारदासः

चार शब्द

पुरुषार्थी विचारवान् चतुरमानवों के लिए भगवान् ने चार वेद दिये हैं। क्योंकि मनुष्य के पास शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा ये चार चीजें हैं एवं इन्हीं के लिये चार पुरुषार्थों की आवश्यकता है। शरीर के लिए अर्थ, मन के लिए काम, बुद्धि के लिए धर्म एवं आत्मा के लिए मोक्ष चाहिए। इनका प्रतिपादन वेदों में है। किन्तु जिनको संपूर्ण चारों वेदों के पढ़ने की सुविधा नहीं है, उनके लिए चारों वेदों से हमने दैनिक, साप्ताहिक, चातुर्मासिक एवं वार्षिक स्वाध्यायार्थ मंत्र और पद्यानुवाद सहित चार पुस्तकें लिखी हैं। दैनिक स्वाध्याय के लिए 'वेदसुधा' है, जिसमें पुरुषार्थ के द्योतक ३६५ मंत्र हैं। एक-एक मंत्र और उसके पद्यार्थ को प्रतिदिन याद करने से एक वर्ष में यह पुस्तक पूर्ण होती है। चातुर्मासिक उत्सव पर पढ़ने के लिए 'श्रुतिश्री-संगीत' है, जिसमें मनुष्यमात्र की इच्छा के सूचक ४२५ मंत्र हैं। वार्षिक—उत्सव के लिए 'वेदसंगीत' है, जिसमें चारों वेदों के ५४ सूक्तों के ७५८ मंत्र हैं एवं साप्ताहिक स्वाध्याय के लिए प्रस्तुत 'चारोंवेदों के चार सूक्त' चुने हैं। इसमें अथर्ववेद का सांमनस्यसूक्त, ऋग्वेदका नासदीयसूक्त, यजुर्वेद का ईशोपनिषत्सूक्त एवं सामवेद के लिए पुरुषसूक्त है। सांमनस्यसूक्त के ७ मंत्रों में रामायण के मूल मंतव्य मिलते हैं, नासदीयसूक्त के ७ मंत्रों में भागवत सप्ताह के मूल सिद्धान्त मिलते हैं। चतुश्लोकी या सप्तश्लोकी भागवत इन्हीं ७ मंत्रों के आधार से बनी है। ईशोपनिषद् के १८ मन्त्रों में गीता के संपूर्ण सिद्धान्तों के मूल हैं, इसका हमने वैज्ञानिक अर्थ भी दिया है। एवं चारों वेदों में प्राप्य 'पुरुषसूक्त' में चारों वेदों के मन्तव्य, भागवत

के भगवान्, सत्यनारायण कथा के रहस्य तथा ब्रह्मसूत्र के तत्व मिलते हैं। सर्वप्रसिद्ध रामायण, भागवत, गीता तथा सत्यनारायण के तत्वों का साक्षात्कार उक्त चार सूक्तों की दृष्टि से ही ठीक-ठीक होता है और इन वैदिक सूक्तों का अर्थ इन इतिहास-पुराण के ग्रन्थों में खुल जाता है। अतएव वेदव्यासजी ने कहा है—

"इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्" (महाभारत)

अर्थात् 'इतिहास और पुराण के द्वारा ही वेदार्थ का स्पष्टीकरण करे भगवान् भी कहते हैं—

"वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः" (गीता १५।१५)

यानी 'सब वेदों से मैं ही जाना जाता हूँ।' इसलिए भक्त, सज्जन एवं सुधीजन कम से कम इन चारों वेदों के चार सूक्तों का इतिहास-पुराण के उक्त ग्रन्थों के साथ स्वाध्याय कर पूर्णलाभ प्राप्त करें।

विनीत

रणछोड़दास 'उद्धव'

[१]

अथर्ववेद का सांमनस्यसूक्त—एक मन

(रामायण-रहस्य)

(१)

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या ॥

समान अन्तःकरण और मन, द्वेष न करने का सुविचार ।
करें परस्पर ज्यों गौ करती नवीन बछड़े पर शुभ प्यार ॥

(२)

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः ।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम् ॥

पुत्र पिता का अनुयायी हो, माता से हो उत्तम मन ।
पत्नी पति से मधुसम मीठा शांतियुक्त बोले सुवचन ॥

(३)

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा ।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया ॥

बन्धु-बन्धुमें द्वेष न हो औ बहिन-बहिनमें द्वेष न हो ।
मिलकर एक ही कार्य करें; आपस में उत्तम भाषण हो ॥

(४)

येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः ।
तत् कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः ॥

जिससे विबुध विरोध न करते, द्वेष न आपस में रखते ।
वह वैदिक विज्ञान-ज्ञान घर-घर में मानवहित करते ॥

(५)

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट
संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः ।
अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत
सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणोमि ॥

श्रेष्ठों के सह पंडित होकर मिलकर कार्य सुसिद्ध करो ।
कार्यधुरा को सिरपर लेकर आपस में न विरोध करो ॥
आपस में मीठा भाषण कर ध्येययुक्त आगे बढ़ना ।
उद्देश्य एक, एक मनयुक्त, सत्यज्ञान सबको कहना ॥

(६)

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः
समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि ।
सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा
नाभिमिवाभितः ॥

सबकी समान प्याऊ हो औ अन्नभोग सह हो बन्धन ।
चक्रमध्य में ज्यों आरे हों, मिलकर करो अग्नि-अर्चन ॥

(७)

सध्रीचीनान् वः समनसस्कृणोम्येक—
श्नुष्टीन्त्संवननेन सर्वान् ।
देवा इवामृतं रक्षमाणाः
सायंप्रातः सौमनसो वो अस्तु ॥

सब आपस में प्रेम करो तुम एक कार्य में लग जाओ ।
एक हि विचार मन में रखना एक संघ रखते जाओ ॥
मन में उत्तम विचार रखना, सायं-प्रातः सब वैसे ।
सुधा सुरक्षक देव एक मत से ही रहते हैं जैसे ॥

—अथर्व वेद ३।३०

कहाँ और क्या ढक रक्खा था ? किसके आश्रयमें यह था ?
दुष्प्रवेश औ अगाध जलका समुद्र क्या था ? क्या वह था ? ।।१।।

[२]

ऋग्वेद का नासदीयसूक्त-सृष्टिविद्या

(भागवत-रहस्य)

(१)

नासदासीन्नो सदासीत् तदानीं
नासीद्रजो नो व्योमापरो यत् ।
किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्
नम्भः किमासीद्गहनं गभीरम् ।।

सृष्टि प्रथम नहिं बनी हुई थी एवं न शून्य स्थिति में थी ।
नहिं ऊपर का नीला नभ था, नहिं आरंभिक स्थिति में थी ।।

(२)

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि
न रात्र्या अह्न आसीत् प्रकेतः ।
आनीदवातं स्वधया तदेकं
तस्माद्धान्यन्न परः किं च नास ।।

उस समय मृत्यु नहिं थी एवं किसी चीज का जन्म न था ।
तथा रात्रि का पता नहीं था, दिखने वाला दिवस न था ।।
श्वासोच्छ्वास-रहित औ एक हि उपादानसे जीवित था ।
उससे कुछ भी परे नहीं था एवं कुछ भी भिन्न न था ।। २ ।।

(३)

तम आसीत् तमसा गूढमग्रे—
ऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम् ।
तुच्छेनाभ्वपिहितं यदासीत्
तपसस्तन्महिना जायतैकम् ॥

तब केवल आरम्भकाल का पूर्वरूप था अन्धःकार ।
एक गतिरहित कुहर समान हि माया का ही था विस्तार ॥

(४)

कामस्तदग्रे समवर्तताऽधि
मनसो रेतः प्रथमं यदासीत् ।
सतोबन्धुमसतो निरविन्दन्
हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा ॥

जीवकर्म था बीज इसीसे प्रभु के मन में उपजा काम ।
कवि मति से विचार कर मन में जाने रस-बलबंध तमाम ॥

(५)

तिरश्चीनो विततो रश्मिरेषा—
मधः स्विदासीदुपरि स्विदासीत् ।
रेतोधा आसन् महिमान आसन्
स्वधा अवस्तात् प्रयतिः परस्तात् ॥

द्रव्यों की किरणें तिरछी; नीचे ऊपर भी फैल गई ।
प्राणी, अक्षर, क्षर और अन्न ऊपर नीचे प्रकृति हुई ॥

(६)

को अद्धा वेद क इह प्रवोचत्
कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः ।
अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेना—
ऽथा को वेद यत आवभूव ॥

सृष्टि कहाँ से उपजी है यह ठीक जानता-कहता कौन ।
विबुध जगत् के भी बनने से पीछे उपजे जाने कौन ।

(७)

इयं विसृष्टिर्यत आवभूव
यदि वा दधे यदि वा न ।
यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्
त्सो अङ्ग वेद यदि वा न वेद ॥

विविध सृष्टि जिससे उपजी वह धारण करता है या ना ।
इसका अधिपति नभवत् व्यापक हे प्रिय ! वह जाने या ना ॥

—ऋग्वेद १०।१२९
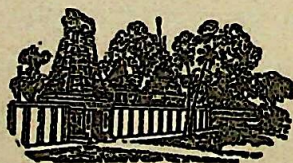
यजुर्वेद का ईशविज्ञान

(श्रीभगवद्गीता-रहस्य)

उपक्रम—

पूर्वों का भी परमेश्वर गुरु जो विज्ञान-ज्ञान का रूप।
वही प्रजा में राजधर्म का मार्ग दिखाने वाला भूप ॥१॥
उसकी यह ईशोपनिषद् है जो कहती तात्विक उपपत्ति।
निश्चय औ स्थिति अर्थ उसीका, बनी कर्मसाधन सम्पत्ति ॥२॥
श्रद्धा गुण को तथा कार्य-कारण बतलाती 'विद्या' योग्य।
विषय-निकट निश्चित बैठाती, सो 'उपनिषद्' कहे छांदोग्य ॥३॥

मंगल—

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥ ॐ शांतिः शांतिः शांति

ॐ वह ईश्वर पूर्ण कहाता, अंश जीव यह भी है पूर्ण।
पूर्ण पूर्ण से होता त्यों ही बचता पूर्ण लिये से पूर्ण ॥४॥

विज्ञान— (विज्ञान की कविताओं के लिए हमारी 'ईशविज्ञान-सुधा' से सहायता लें)

'अह -अम् ही से 'ॐ' बनता है बनता पदान्त ह ही उकार।
अपूर्ण पद ही जीव कहाता, अतः 'अहं' उसका आकार ॥५॥
अधिदैवत है पूर्ण स्वयं में त्यों अध्यात्म स्वयं परिपूर्ण।
इन दो का प्रतिपादन करती यह सर्वोपनिषद् भी पूर्ण ॥
श्रेयकार्य में विघ्न अनेकों, इससे मंगल है दो बार।
ज्यों संहारक रुद्रदेव के लिए नमन हैं बारम्बार ॥ ६ ॥

(१)

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥

ईश्वरमय यह सब अनुभव कर, जग जो कुछ जंगम स्थावर ।
उससे त्यागे से पालन कर, द्रव्य किसी का मत ले नर ॥७॥

राजनीतिपक्ष—

जिन जड़-चेतन चीजों के हों स्वामी उनका मतकर भोग ।
अधिकारी हट जाने पर फिर कर सकता है उनका भोग ॥ ८ ॥

धर्मनीतिपक्ष—

विश्ववस्तु के स्वामी भी हैं, उनकी इच्छा से ले दान ।
धर्माज्ञा के पालन से ही दोनों लोकों में सुख जान ॥ ९ ॥

विज्ञाननीतिपक्ष—

दिया कर्म-अनुसार ईश ने भोग, उसीमें कर सन्तोष ।
भाग दूसरे का मत लेना, विज्ञानों का रखना कोष ॥१०॥

(२)

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥

यहाँ वर्ष सौ जीवित रहना सुकर्म विधियुत करते ही ।
कर्मलेप नहिं हो तुझ नर को, इससे अन्य सुमार्ग नहीं ॥११

राजनीतिपक्ष—

सामाजिक सुखहेतु मनुज वय कर्मनिष्ठ हो करे व्यतीत ।
इसी भाँति नर रह सकते हैं कर्मदोष से रहित, पुनीत ॥१२॥

धर्मनीतिपक्ष —

वेदविहित कर्मों को करता रहता है जो नर सौ वर्ष ।
उसको यहाँ न धोखा होगा, लोक दूसरे में भी हर्ष ॥१३॥

विज्ञाननीतिपक्ष—

विदेह बन निष्काम कर्मकर, विधिप्रतिपादित हों या इष्ट ।
नहीं वासना लेप लगेगा और न कर्म रहें अवशिष्ट ॥१४॥

(३)

असुर्यानाम ते लोका अन्धेन तमसा वृताः ।
तांस्ते प्रेत्याभिगच्छान्ति ये के चात्महनो जनाः ॥

असुरलोक बने हैं जो वे अंधतमससे हैं परिव्याप्त ।
आत्महनन करनेवाले जन उनको मरकर होते प्राप्त ॥१५॥

राजनीतिपक्ष—

प्राणी का वध करते हैं जो पतित नराधम स्वार्थनिरत ।
वे ज्योतिर्भ्रष्टा पाते हैं, तममय कारावास सतत ॥ १६ ॥

धर्मनीतिपक्ष —

भयकंपित हो जगक्लेशों से आत्मघात करते हैं जो ।
प्रलयकाल तक घोर तमोमय असुरधाम में पड़ते सो ॥१७॥

विज्ञाननीतिपक्ष —

काम्यकर्म से आवृत हो नर तज देता निज ज्योतिर्लोक ।
औ पाता है जन्म-मरणमय असुर्य यानी तनुमय लोक ॥१८॥

अनेजदेकं मनसो जवीयो–
नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत् ।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्
तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥

आत्मतत्व अपने स्वरूप से नाहीं चलने वाला है ।
एकरूप है तथैव मन से भी सुतीव्रगति वाला है ॥
प्राप्त न करतीं जिसे इंद्रियाँ उनसे पूर्व गमन करता ॥
स्थिर होकर अन्यों से आगे, उसमें जीव कर्म धरता ॥ १६ ॥

विज्ञान—

अद्वैताव्यय का विद्यामय स्थिर कहलाता अमृतविभाग ।
तथा कर्ममय चल कहलाता, उस अव्ययका मृत्युविभाग ॥ २० ॥
अस्ति-भाति-प्रिय पदार्थ मिलना त्रयी नाम कहलाता वेद ।
नामरूपकर्मात्मक भौतिक पदार्थसे हों प्रतीत वेद ॥ २१ ॥
पंचतत्व प्रत्येक पिण्ड हैं, उन्हें मिलाता वायु-वराह ।
चहूँ ओर स्थिर वही आदि-मख-श्वेत-ब्रह्म-एमूषवराह ॥ २२ ॥

(५)

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके ।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥

आत्मतत्व चलनेवाला है और न चलने वाला है ।
दूर, पास, सबके अन्तर्गत; सब से तथा निराला है ॥ २३ ॥

विज्ञान—

विषययुक्त मति अशुद्ध बनकर आत्मा से ही रहे अयुक्त ।
कार्याकार्य न जाने, वह मति है ही नहीं अविद्यायुक्त ॥ २४ ॥
मुक्तात्मा मानता अचल को है उसके समीप वह तत्व ।
संसारी के लिए दूर है, ज्ञान-कर्मसंयुत वह तत्व ॥ २५ ॥
ज्ञान-कर्म जिज्ञासु मानता, उपासना है सुबुद्धियोग ।
विद्या स्थिति औ बने कर्म गति, यजु है स्थिति-गतिका संयोग ॥२६॥

(६)

यस्तु सर्वाणि भूतानि, आत्मन्येवानुपश्यति ।
सर्वभूतेषुचात्मानं ततो न विजुगुप्सते ॥

जो सब भूतोंको विलोकता अपने आत्मामें ही है ।
सब भूतोंमें आत्मा को, इसके कारण न घृणा ही है ॥ २७ ॥

विज्ञान—

आत्मामें ही कर्मभाग है, इसको ही कहते हैं ज्ञान ।
विश्वकर्म भी ज्ञानयुक्त है; इसको कहते हैं विज्ञान ॥ २८ ॥
आत्मा तथा विश्व संयुत हैं, निश्चय जाने बुद्धि विशेष ।
स्तुति-निन्दा से है अतीत वह, जिसमें नहिं है रागद्वेष ॥ २९ ॥
राग-द्वेषसे मोह, मोहहत बुद्धि न कर पाती कुछ ध्यान ।
निर्बल मति मनको बल देती, वह मतिको करता वेभान ॥ ३० ॥

(७)

यस्मिन्त्सर्वाणि भूतानि, आत्मैवाभूद्विजानतः ।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ॥

सब पदार्थ ज्ञानीको आत्मा ही होते प्रतिभात जहाँ ।
उस एकत्व-तत्वदर्शीको मोह कहाँ औ शोक कहाँ ॥ ३१ ॥

विज्ञान—

नानाभाव मोह उपजाते, द्वैत शोक पैदा करता ।
ब्रह्म-कर्म अद्वैत रूप है, शोक-मोह को जो हरता ॥ ३२ ॥
ब्रह्म एक यों शब्द जानना, मनकी श्रद्धाका है काम ।
कारण-कार्य विशेष जानना, बुद्धियोग है निश्चय नाम ॥ ३३ ॥
यहाँ द्वैत-अद्वैत भेद के अलग-अलग अधिकारी जान ।
द्वैत भाति तज ब्रह्म-कर्ममय बना कहा श्रुतिने विज्ञान ॥ ३४ ।

(८)

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रण—
मस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूःस्वयंभू—
र्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधात्—शाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥

शुद्ध, सर्वगत, अकाय अक्षत, स्नायुरहित वह आत्मा है ।
निर्मल, अपाप, सुकवि, मनीषी, सबसे श्रेष्ठ स्वयम्भू है ॥
अनादि से ही इन्द्रियगण औ उनके विषयों को उसने ।
योग्य रीति से तथा व्यवस्थापूर्वक निश्चित है कीःहें ॥३५॥

विज्ञान —

विराट् से उपजाता 'शुक्र' व उसे घेरता वायु-वराह ।
जगत् शुक्र से पैदा करता, परम्परागत यही प्रवाह ॥३६॥
शुक्र आप औ अग्निभागमय महद्ब्रह्म है उभयसमष्टि ।
विजातीय औ सजातीय के धर्ममिलन से है यह सृष्टि ॥३७॥
कवि से काया, मनीषिसे व्रण, परिभूसे है सस्नायु शुक्र ।
और स्वयंभूधर्म-वायु से पापयुक्त बनता है शुक्र ॥३८॥
सृष्टि वायु ने यों ही की थी, जैसी यह दिखती है आज ।
'ऊर्ध्व अग्निका जाना' वैसे भविष्य में भी होंगे काज ॥३९॥

(९)

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायां रताः ॥

अन्धकार में प्रवेश करते, जो हैं कर्म-अविद्याभक्त ।
उनसे भी ज्यादा तममें वे जाते, जो हैं विद्याभक्त ॥४०॥

विज्ञान—

कुछ कहते हैं कर्म आवरक ही है, स्वतन्त्र ज्ञान विशुद्ध ।
दोनों अन्धःकारतेज के समान ही हैं सदा विरुद्ध ॥४१॥
निराकरण उनका करती श्रुति, केवल ज्ञान नहीं पर्याप्त ।
कर्म वासना द्वारा घेरे, ज्ञान भावना से है व्याप्त ॥४२॥
ज्ञानी कर्म त्याग देते हैं, मुक्ति कामना भी है काम ।
बनावटी निग्रहवाले को मिथ्याचारी मिलता नाम ॥४३॥

यहाँ वासना और भावना दोनों से होती आसक्ति ।
कर्मठ वैभवभोक्ता होता, ज्ञानी की ऐश्वर्यविरक्ति ॥ ४४ ॥

(१०)

अन्यदेवाहुर्विद्ययाऽन्यदाहुरविद्यया ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥

विद्या और अविद्या से फल और-और ही बतलाया ।
यों सुनते उन धीरों से, जिनने हमसे उपदेश किया ॥४५॥

विज्ञान—

ज्ञान-कर्म से भी है आत्मा-भिन्न रूप कहते मतिमान् ।
सर्वत्र व्यष्टि-समष्टि में है मिलता ज्ञान व कर्म समान ॥४६॥

दोनों का आधार प्राण-चित्-सोमस्वरूपी है विज्ञान ।
विज्ञान-बुद्धि रविप्रधान है, चन्द्रमुख्य है मन-प्रज्ञान ॥ ४७ ॥

हम जिस ज्ञान-कर्म के ज्ञाता हैं, वह महिमा रवि की रम्य ।
है सोपाधिक विज्ञानात्मा, शुद्धात्मा है अनुभवगम्य ॥ ४८ ॥

(११)

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥

विद्या और अविद्या दोनों को जो साथ जान लेता ।
तरकर मृत्यु अविद्या से ही विद्या से चिरपद लेता ॥४९॥

विज्ञान—

ब्रह्म-कर्म दोनों आत्मा के स्वरूप कहता वेद यथार्थ ।
निवृत्तकर्मों से नहिं बन्धन होगा, कर्म करो ब्रह्मार्थ ॥५०॥

भिन्न ब्रह्मबल और क्षत्रबल रहकर कर न सकें पुरुषार्थ।
ब्रह्म-ज्ञान औ क्षत्र-कर्म के समत्व से होते सर्वार्थ ॥ ५१ ॥
सूर्य-अविद्या-विद्यामय के अंश बुद्धि में हैं एकत्व ।
दोनों का बतलाया स्वरूप, बुद्धियोग ही सत्य समत्व ॥५२॥
श्रुति अध्यात्म तथा अधिदैवत मति-रविका करती व्याख्यान।
इनके सामान्य हि धर्मों के शब्दों द्वारा देती ज्ञान ॥ ५३ ॥

(१२)

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽसंभूतिमुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्यां रताः ॥

असंभूति की उपासना से होते अन्धःकार प्रविष्ट ।
संभूतिलीन जो हैं वे उनसे भी ज्यादा तम-प्रविष्ट ॥ ५४ ॥

विज्ञान —

संभूति-जन्म का स्वामी है, आत्मा का ही रसमय भाग।
असंभूति-मरणाधिष्ठाता, आत्मा का ही बलमय भाग ॥५५॥
क्षणिक बलों को मुख्य मानते, शून्यरूप हैं नास्तिक लोग।
रसके अस्तिविषय में ही रत, अधिक आवरण में वे लोग ॥५६॥
सम्का अर्थ हि दो चीजों का कहलाता है एकीभाव ।
सम्भूति असत्-बल औ सत्-रस इनका ही है एकी भाव ॥५७॥
इसी हेतु रस बललक्षण है, बल के बिना बने रस गुप्त।
यह तम बलतम से भी गहरा वर्णनरहित हि तम-प्रसुप्त ॥५८॥

(१३)

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात् ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥

उत्पत्ति और विनाश से है भिन्न-भिन्न फल बतलाया ।
यों सुनते उन धीरों से, जिनने हमसे उपदेश किया ॥५९॥

विज्ञान—

प्रज्ञानात्मा पृथक् जन्म से औ विनाश से भी है भिन्न ।
जिन वैज्ञानिक ने बतलाया, उनसे सुना उभय से भिन्न ॥६०॥
सत्तारस से युक्त पदार्थ हि संभूतिसंज्ञ है वह अस्ति ।
सत्तारस से वियुक्त वस्तु हि असम्भति है विनाश-नास्ति ॥६१॥
माया-बल की रस-आत्मा के अनुग्रह से होती सम्भूति ।
रसकी त्यागावस्था में ही असम्भूति की है अनुभूति ।६२॥

(१४)

संभूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयं सह ।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्याऽमृतमश्नुते ॥

उत्पत्ति और विनाश इन दोनों को साथ जान लेता ।
विनाश से ही तैर मृत्यु को अमृत जन्म से पा लेता ॥६३॥

विज्ञान—

सम्भूति और विनाश को जो एक बिन्दुपर लेता जान ।
निष्काम भक्ति जग की करता, दृष्टि अमृतपर दे धीमान् ॥६४॥

(१५)

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् ।
तत्त्वम्पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये ॥

सुसत्य का मुख ढँका हुआ है, सोनेके-से सुपात्र से ।
पोषक! उघाड़, सत्यधर्म को दिखलाने के लिए उसे ॥६५॥

विज्ञान—

पात्र हिरण्मय से सत् का मुख ढँका हुआ है पूषादेव ।
चाक्षुष सौरपुरुष दिखलाने के हित हटाइए पट देव ॥६६॥

रूप वास्तविक जिसका 'छाया' उसके आने से पटपात्र ।
हट जाता है, दृष्टिरोध से दर्शन होता सर्षपमात्र ॥६७॥

अथवा आत्मतत्व को ढँकता भू का स्वर्ण-हिरण्मयपात्र ।
पार्थिव सम्पत् के पति 'पूषा' की सेवा से हटता पात्र ॥६८॥

(१६)

पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूह रश्मिन्त्समूह ।
तेजो यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि ।
योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि ॥

विज्ञान—

हे जगपोषक! सविता, हे यम! एकाकी रहनेवाले ।
अहो प्रजापतिनन्दन! तू अपनी किरणों को सिमटाले ॥६९॥

तव स्वरूप जो अतिमंगलमय उसका दर्शन करता हूँ ।
मर्त्याग्नि देह है, अमृताग्नि हि पुरुषरूप मैं रहता हूँ ॥७०॥

विज्ञान—

जग का मूल प्रवर्तक ऋषि है, उसको ही कहते हैं प्राण।
यजुका 'यव' ऋषिप्राण जातिसे एकर्षि आदि बना प्रमाण ॥७१॥

एकर्षि भौम, अन्तरिक्ष यम, सूर्य दिव्य ही पूषाप्राण।
कृष्णकिरण दे, सौरतेज ले, देखूं तव-मम तनुकल्याण ॥७२॥

अग्नि वायु-रवि ही वैश्वानर, हिरण्यगर्भ तथा सर्वज्ञ।
इनका अंश हि जीवात्मा है—वैश्वानर, तैजस औ प्राज्ञ ॥७३॥

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम्।
ॐ क्रतो स्मर, कृतंस्मर, क्रतो स्मर, कृतंस्मर ॥

प्राण अपर्थिव स्वामृत है औ देह अन्त में है भस्मी।
ॐ स्मरण कर, क्रतो! स्मरण कर; स्मरण करो हे कृतकर्मी ॥७४॥

विज्ञान—

भौतिक धातु इरा कहलाती, इससे तनु बनती याम्रूप।
मध्यवायु ही ओज बना है, दिव्य इन्द्र से मन सुररूप ॥७५॥

मध्य प्राण यदि इरायुक्त है, तो वह पाता मृत्यु हि भाव।
भू-विषयों में अनासक्त है, तो वह पाता अमृतस्वभाव ॥७६॥

क्रतुका अर्थ इरादा है औ 'दक्ष' सफलता का 'कृत' नाम।
स्मरण करो संकल्प कर्मका, कृत का स्मरण करो निष्काम ॥७७॥

निज-ज्ञानार्थ इरादा क्या था और किया क्या है व्यवहार।
सुसंकल्प श्रवणानुकूल हो तथा कार्य सह सिद्धि द्वार ॥७८॥

(१८)

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो—
भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ॥

हमें कर्मफल को हि भोगने ले चल प्रकाशदाता अग्नि ! ।
सुमार्ग से हे देव ! सभी कृतकर्मों के ज्ञाता हे अग्नि ! ॥
सब पाखंडी पूर्ण हमारे पापों को तू विनष्ट कर ।
तेरी सेवा के ही हित हम कहते हैं बहु-बहु नमस्कर ॥७६॥

विज्ञान—

आदि स्वयंभू ब्रह्मसंज्ञ है, देवसत्य हैं सर्वज्ञादि ।
सभी सत्य ये अग्निरूप हैं, स्वयंभु-वाग्—देवाकाशादि ॥८०॥
अस्ति, भाति औ उभय दृष्टि से दृश्य वस्तु सब 'वयुन'-अभिन्न ।
वयुन ईश का अन्न कहा है, नमः मनुष्यरूप है अन्न ॥८१॥

उपसंहार—

प्रभु से प्राप्त भाग को भोगो, परधन मत लो, करो स्वकाम ।
सूर्यात्मा हो, कृतसंकल्पी, लगो स्वकर्मों में निष्काम ॥८२॥

मंगल—

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥ॐ शांतिःशांतिःशांतिः॥

ॐ वह ईश्वर पूर्ण कहाता, अंशजीव यह भी है पूर्ण ।
पूर्ण-पूर्ण से होता, त्यों ही बचता पूर्ण लिये से पूर्ण ॥८३॥

विज्ञान—

अधिदैवत-अव्यय, अक्षर,क्षर और परात्पर है पूर्णेन्द्र ।
क्रतु से ही पुरुषार्थ कर्म कर 'उद्धव' पूर्ण बने जीवेन्द्र ॥८४॥

गायत्रसाम
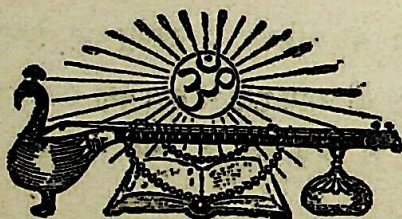
स नि़ रि | रि–रि रि रि–रि रि– – – रि रि–रि |
२   १ | १
ओ ऽ३ म् | त ऽ त्स वि तु ऽ वँ रे ऽऽऽ णि यो ऽ म् |

रि–रि– – – रि– – –रि–रि रि– – –रि–रि स |
  २
भा ऽ र्गो ऽऽऽ दे ऽऽऽ व ऽ स्य धी ऽऽऽ मा ऽ ही ऽ |

स रि– – – रि– – –रि–रि स – रि स रि स | रि–रि स
  १
धि यो ऽऽऽ यो ऽऽऽ नः ऽ प्र चो ऽ ऽऽऽऽ | हिम् आ २

रि–रि– | स – नि़ – ध़ – प़— ||
१ | २
हा ऽ यो ऽ | आ ऽ ३ ४ ५ ||

सामवेद के लिए पुरुषसूक्त

(सत्यनारायण-रहस्य)

(१)

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
सभूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ (आवहनं)

अनन्त मस्तक, अनंत आँखें, अनंत पदवाला पुरुष ।
पृथ्वी को चहुँ ओर घेरकर स्थित है अंगुल अधिक दश ॥

(२)

पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ (आसनं)

भूत, भविष्य व वर्तमान में, वह सब परमात्मा ही है ।
अन्न सुखों से अति ही ऊँचा अमरपने का स्वामी है ॥

(३)

एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ (पाद्यं)

इसकी इतनी महिमा है परमात्मा इससे ज्यादा है ।
इसका एक अंश सब प्राणी, तीन भाग स्वर्गामृत है ॥

(४)

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥ (अर्घ्यं)

तीन भाग परमात्मा ऊपर उच्च भाग में प्रकाशता ।
इसका भाग यहाँ फिर बनता विविध विभक्त भोग्य-भोक्ता ॥

(५)

तस्माद्विराडजायत विराजो अधिपूरुषः ।
सजातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ (आचमनीयं)

इससे विराट् बने, विराट् पर एक नियामक पुरुष बने ।
पैदा होकर विविध बना वह, प्रथम भूमि फिर देह बने ॥

(६)

यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।
वसंतो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥ (स्नानीयं)

यज्ञ किया देवों ने जब परमेश्वर-रचित सृष्टि हवि थी ।
उसका घी वसंत था, इन्धन ग्रीष्म, शरदृतु ही हवि थी ॥

(७)

तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजंत साध्या ऋषयश्चये ॥ (वस्त्रं)

प्रथम प्रकट उस यज्ञपुरुष को, मानसिक यज्ञ में लेते ।
उससे देव, साध्य, ऋषि ये संकल्पयज्ञ थे कर लेते ॥

(८)

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः संभृतं पृषदाज्यम् ।
पशून्तांश्चक्रे वायव्यानारण्यान् ग्राम्याश्चये ।।(यज्ञोपवीतं)

सर्वशुद्ध उस यज्ञपुरुष से, दधि-घृत पदार्थ सब उपजे ।
पृथ्वी, वनपशु तथा ग्रामपशु, ईश-अंश से ये उपजे ॥

(९)

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छंदांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ।। (चंदनं)

सर्वपवित्र सुयज्ञपुरुष से, ऋग् सामश्रुति के मंत्र ।
अथर्व एवं यजुर्वेद के हुए उसीसे हैं मन्त्र ॥

(१०)

तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः ।
गावोह जज्ञिरे तस्मात् तस्माज्जाता अजावयः।। (पुष्पाणि)

उससे अश्व हुए, दोनों ही तरफ दंतवाले उससे ।
उससे उपजीं गौएँ-बकरी और भेड़ उपजी उससे ॥

(११)

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ।।(धूपं)

जब पुरुष की विशेष धारणा की थी, रचना कितनी तब ।
इसका मुख क्या ? व बाहु क्या है ? जाँघ-पाँव कहलाते अब ? ॥

(१२)

ब्राह्मणोऽस्यमुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यःपद्भ्यां शूद्रोअजायत ॥ (दीपं)

ब्राह्मण इसका मुख है क्षत्रिय बाहुहि इससे कीन्हें हैं।
वैश्य बने जंघा इसकी औ शूद्रचरण से उपजे हैं॥

(१३)

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥ (नैवेद्यं)

मनसे चन्द्र बना, आँखों से सूर्यदेव उत्पन्न हुआ।
मुख से इन्द्र व अग्नि, प्राण से पवनदेव उत्पन्न हुआ॥

(१४)

नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशःश्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन्। (प्रदक्षिणां)

हुआ नाभि से अंतरिक्ष, सिरसे द्युलोक उत्पन्न हुआ।
पदसे पृथ्वी, कानोंसे दिक् तथा लोक कल्पता हुआ॥

(१५)

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः स समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम् ॥ (नमस्कारान्)

यज्ञप्रचारक देवों ने जब द्रष्टा ईश्वर को बाँधा।
उसकी सात परिधियाँ थीं, इक्कीस बनाई थीं समिधा॥

(१६)

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥

(मंत्रपुष्पम्)

यज्ञ से हि देवों ने यज्ञ किया था, वे विधि प्रथम हुए ।
जहाँ पूर्व के साध्यदेव हैं, यश सह सुरपुर प्राप्त हुए ॥

(१७)

ओ३म् अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्त्तताग्रे ।
तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे ॥

प्रथम जलों से सार इकट्ठा हुआ, मिला प्रभु नियमों से ।
कारीगर ने रूप बनाये, मर्त्य-देव हो नियमों से ॥

(१८)

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्
तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥

जानूं तमसे परे महत्तम तेज सूर्यसम ईश वही ।
उसे जानकर मिले अमरता, अन्य मार्ग तो है ही नहीं ॥

(१९)

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते ।
तस्य योनिं परि पश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा ॥

ईश गर्भ के अन्दर आता, अज होकर बहु जन्म धरे ।
ज्ञानी जन्म-शक्ति को जाने, उसमें सभी भुवन ठहरे ॥

(२०)

यो देवेभ्यो आतपति यो देवानां पुरोहितः ।
पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये ॥

जो देवों के लिए प्रकाशित, नेता, पहले जन्मा है।
तेजस्वी उस विश्वात्मा के लिए प्रणाम हमारा है॥

(२१)

रुचं ब्राह्मं जनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन् ।
यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन्वशे ॥

ब्रह्मतेज को लेनेवाले उत्पादक यों बोले देव ।
ज्ञानी प्रभु को यों जानेगा, उसके वश में होंगे देव॥

(२२)

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे
नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् ।
इष्णान्निषाणामुं म इषाण सर्वलोकं म इषाण ॥

श्री औ लक्ष्मी ईश-पत्नियाँ दिन रजनी हैं दोनों ओर।
तारागण प्रभु का प्रकाश औ द्यु-भूमि मुख प्रभु चारों ओर॥

इसी रूप में निजको देखो साधक स्तुति करने वाले! ।
सर्वलोक की इच्छा होगी, विश्वरूप धरनेवाले ॥

श्रीरविधाम-सामूहिकप्रार्थना

(१)

ॐ ऋचं वाचं प्रपद्ये, मनो यजुः प्रपद्ये, साम प्राणं प्रपद्ये,
चक्षुः श्रोत्रं प्रपद्ये, वागोजः सहौजो, मयि प्राणापानौ ॥
ॐ तच्चक्षुर्देवहितं. पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्, पश्येम शरदः शतं,
जीवेम शरदः शतं, शृणुयाम शरदः शतं, प्रब्रवाम शरदः शतं,
अदीनाः स्याम शरदः शतं, भूयश्च शरदः शतात् ॥

(२)

रघुपति राघव राजाराम । ऋषभ, बुद्ध, ॐ, गोविंद श्याम ।
ईश्वर, अल्ला, ईसा नाम । सबको सन्मति दे रविधाम ॥
सच्चिदानन्द उत्पादक प्रभु की सुकान्तिका ध्यान करें ।
वह हम सबकी ही मतियों को विशेष सुप्रेरणा करे ॥

(३)

मातृभूमि, धर्मभूमि, यज्ञभूमि, कर्मभूमि ।
धन्यभूमि, पुण्यभूमि, भारतमाता ॥ १ ॥
आदिभूमि, जन्मभूमि, ऋषिभूमि, कृषीभूमि ।
वेदभूमि, देवभूमि, आर्यमाता ॥ २ ॥
स्वर्णभूमि, सुवर्णभूमि, योगभूमि, तपोभूमि ।
आचारभूमि, विचारभूमि, वेदमाता ॥ २ ॥
वीरभूमि, शूरभूमि, गीर्वाणभूमि, निर्वाणभूमि ।
आचार्यभूमि, सन्तभूमि, संस्कृतिमाता ॥ ४ ॥
चौवीस नाम उच्चारते, वंदे मातरं गीत गाते ।
सुखी नित्य होते, सर्वतन्त्र स्वतन्त्र ॥ ५ ॥

(५)

बन्दे वेदमातरम् ।

विद्यां विमलां प्रचोदयन्तीं, तत्त्वमस्यादिवाक्यदाम् ।
आयुः प्राणप्रजापशुशुभदां, कीर्तिंद्रविणनिजानंददाम् ।
पावमानीं ब्रह्मवादिनीं, उद्धववरदां मातरम् ॥ १ ॥

(५)

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु माकश्चिद्दुःखभाग्भवेत् ॥

ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

व्यक्ति में शान्ति ! राष्ट्र में शान्ति !! जगत् में शान्ति !!!

श्रीवेदमाता की जय, श्रीगीतामाताकी जय,

श्रीमर्यादापुरुषोत्तम रामचन्द्र की जय ।
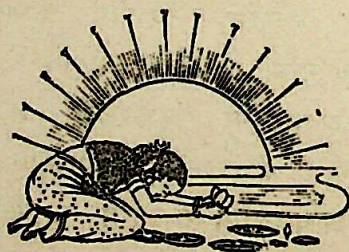
सर्वदेवता-आरती

(१)

आरती सत्यदेवता की, ओंकार वेदमाता की ॥ (ध्रुवपद)
गजानन; नारायण वह है, सदाशिव, उमा, रमा वह है।
महालक्ष्मी, काली वह है, महा श्रीसरस्वती वह है।
सविता-सावित्री वह है, द्विजों की गायत्री वह है।
वही है इन्द्र, वही है चन्द्र, नरों में नरेन्द्र;
जनार्दनमय इस जनताकी ॥ १ ॥ ओंकार०

वही था लक्ष्मण अरु हनुमान्, बना शत्रुघ्न, भरत, श्रीमान्।
वाल्मीकीय रामका गान, करे मानवगण का कल्याण।
इतिहास व पुराणग्रन्थ, वेद से निकले सब पन्थ।
हृदयमें राम, करे विश्राम, सुखों का धाम,
राम औ देवी सीताकी ॥ २ ॥ ओंकार०

वही गोपाल बना यदुचन्द, भागवत कहे सच्चिदानन्द।
वही बन आया गुरुगोविन्द, उसे ही कहते बालमुकुन्द।
वेदों ने सत् एक कहा, सुविद्वानों ने विविध कहा।
अयोध्याधीश, द्वारकाधीश, वही जगदीश;
श्याममय उसकी गीताकी ॥ ३ ॥ ओंकार०

यज्ञ का देव वही यज्ञ, बना सर्वज्ञ व अल्पज्ञ।
वही है वेदों का विज्ञ, बना साधारण वह अज्ञ।
रवि, सोम व मंगलग्रह है; बुध, गुरु, शुक्र व शनि वह है।
राहु अरु केतु, कर्मका हेतु, धर्म का सेतु;
उसी रक्षक पितु-माताकी ॥ ४ ॥ ओंकार०

कहते अग्नि, पवन, आकाश, कहते जल, पृथ्वी व प्रकाश ।
उसीसे होता सर्व विकाश, उसीसे फैला सर्व प्रकाश ।
यहाँ जितना जो कुछ भी है; हुआ होगा, जो अब भी है ।
रङ्क अरु भूप; श्वान, गोरूप; एकके रूप;
करो 'उद्धव' प्रभुसत्ता की ॥ ५ ॥ ॐकार०

श्रीवेदमाता की जय

—

(२)

गीता एवं श्रीकृष्ण की आरती

आरती भगवद्गीता की एवं रक्षणकर्ता की ॥ (ध्रुवपद)
यहाँ जब धर्मग्लानि होती, अधर्मी की बढ़ती होती ।
सदाचारी को दुःख अपार, तब हि होता है प्रभु-अवतार ।
साधुजन की रक्षा करता, असुरगण का विनाश करता ।
वेद-उद्धार, धर्म-उद्धार, बताते सार,
वेद-अवतरिता गीता की ॥ १ ॥ एवं रक्षण
क्लेश-आसक्ति जनों में है, क्लेश-अज्ञान जनों में है ।
क्लेश-अविकास जनों में है, क्लेश-आवेश जनों में है ।
उन्हीं से करने बेड़ा पार, बताये बुद्धियोग हैं चार ।
वेद हैं चार, बुद्धि भी चार, किया सुविचार;
वेद से निकली सरिता की ॥ २ ॥ एवं रक्षण०
अथर्व हि अनासक्तिमति दे, वेद ऋग् ज्ञानयोगमति दे ।
साम ऐश्वर्ययोगमति दे, यजुर्वेद ही धर्ममति दे ।
इन्हें राजर्षि-सिद्धविद्या, राजविद्या व आर्षविद्या ।
नाम दे आर्य, किया था कार्य कृष्ण आचार्य;
बुद्धि के दाता सविता की ॥ ३ ॥ एवं रक्षण०

वही वेदों का ज्ञान महान्, कहा था परंपरा को जान।
क्लेश अर्जुन को हुआ महान्, तब हि बोले थे श्रीभगवान्।
विवस्वान् को कहा था ज्ञान, वही वन आये राम महान्।
अयोध्याधीश, द्वारकाधीश, वही जगदीश,
श्याममय उसकी गीता को ॥ ४ ॥ एवं र०
शंख ही ज्ञान चिन्ह को जान, चक्र ही धर्म स्वकर्म महान्।
गदा ऐश्वर्यहि भक्तिप्रधान, पद्म वैराग्यचिन्ह पहचान ।
इन्हीं को भग कहते मतिमान्, इन्हें धारण करते भगवान्।
भगों को धार, क्लेश को मार, विश्व को पार,
करो 'उद्धव' प्रभुसत्ता की ॥ ५ ॥ एवं र०

श्रीगीतामाता की जय

---

(३)

श्रीरामचन्द्रजी की आरती

(रचयिता–श्रीघनश्यामजी व्यास)

आरती दशरथनंदन की, अनुज सह माता सीता की ॥ (ध्रु०)
अवध नगरी में जन्म लिया, भ्रातसँग ललित विनोद किया।
यज्ञ की रक्षा करने आप, मिटाने मुनियों का संताप।
विश्वामित्र साधुसंग आय, दिये सब निशिचर मार भगाय,
अहिल्या नार, शाप से तार, किया उद्धार,
अनोखी महिमा पदरज की ॥१॥ अनुज सह०

वहाँ से जनकपुरी आये, जनकने सादर बुलवाये ।
ले गये रंगभूमि नृपबाल, जहाँ बैठे थे सब भूपाल।
उठाया शिवधनु फूल समान, हिला न सके थे वीर महान्।
चढ़ाया दंड, किये दो खंड, हिला ब्रह्माण्ड;

पहनली वरमाला सिय की ॥२॥ अनुज

पिता की अनुमति को संभाल, विताने वन में चौदह साल।
जानकी और लखन के साथ, पहुँचे गंगातट रघुनाथ।
वहाँ केवट ने जिद करली, चरण धोने की अनुमति ली।
सुचरण परिवार, पूज्य को तार, ले गया पार;
धन्य चतुराई केवट की ॥३॥ अनुज०

निशाचर जोगी रूप बनाय, गया ले सिय प्रतिबिंब चुराय।
खोज में पहुँचे पवनकुमार जलाकर करदी लंका छार।
लंक के असुर दिये सब मार, चढ़े थे कपि संग बालिकुमार।
लिया अवतार, असुर संहार, मिटा भूभार;
हरण की विपदा भक्तन की ॥४॥ अनुज०

विभीषण लंकाधीश बनाय, लौटे चौदह वरस विताय।
खबर माता ने जब पाई, धेनुसी दौड़ी सब आई।
मिले सबसे ही कंठ लगाय, नयन से आँसू झरते जाँय।
सुप्रेमनिधान, सभी प्रिय जान, किया सम्मान;
धन्य महिमा श्री रघुवीर की ॥ ॥ अनुज०

सुजन-गुरु अनुमति जब पाई, सिंहासन बैठे रघुराई।
सलक्ष्मण-भरत-शत्रुहन है, वाम में सीता आसन है।
पद्मपद पवनतनय कर है, छाँव से मन सबका मोहे।
हृदय में राम, करे विश्राम, कहे 'घनश्याम';
राम औ देवी सीता की ॥६॥

श्रीमर्यादापुरुषोत्तम रामचन्द्र की जय

मन्त्रपुष्प

(१)

ॐ अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानिदेव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम (य. ४०।१८)

(२)

ॐ आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः
शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः
सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णूरथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य
वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु
फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् (य. २२।२२)

(३)

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः
(ऋ. ।१६४।५०)

(४.)

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्यसाहिने । नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे ।
स मे कामान् काम कामाय मह्यम् । कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु ।
कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः । ॐ स्वस्ति । साम्राज्यं
भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं माहाराज्यमाधिपत्यमयं
समंतपर्यायी स्यात् सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात् । पृथिव्यै
समुद्रपर्यन्ताया एकराळिति । तदप्येषः श्लोकोऽभिगीतो मरुतः
परिवेष्टारो मरुत्तस्यावसन् गृहे । आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वे देवाः
सभासद इति ॥ (ऐतरेय ब्राह्मण ८।२१)

(५)

ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥
ॐ यो वै तां ब्रह्मणो वेदामृतेनावृतां पुरम् ।
तस्मै ब्रह्म च ब्राह्माश्च चक्षुः प्राणं प्रजां ददुः ॥(अ. १०।२।२९)

मंत्रपुष्प के १ लें मंत्र का अर्थ ईशविज्ञान में आया है। २ रे मंत्र का अर्थ—'हे ब्रह्मन् ! ब्राह्मण ब्रह्मवर्चस्वी (ज्ञानी) उत्पन्न हो। राष्ट्र में क्षत्रिय वर्ग वीर, धनुर्धारी, नीरोग एवं महारथी उत्पन्न हो। गाय दूध देनेवाली, बैल बोझ ढोनेवाला, घोड़ा तेज चलनेवाला, स्त्री रूप गुणवती, रथी जयशील उत्पन्न हो। यजमान का युवापुत्र सभाप्रिय एवं वीर उत्पन्न हो। समय-समय पर पर्जन्य वर्षा करता रहे। हमारे लिए ओषधिएँ फलवती बनकर पकतीं रहें। (इस प्रकार से हे ब्रह्मन् ! आप हमारे लिए) योग-क्षेम का निर्वाह करते रहें।'

३—से मंत्र का अर्थ पुरुषसूक्त में आया है।

४—थे मंत्र का अर्थ—'सर्वशक्तिमान् राजाधिराज और उपासकों की प्रार्थना सुनने वाले प्रभु के लिए हम सब उपासक नमस्कार करते हैं। वह हमारी मनोकामना पूर्ण करे। उस सर्वराजाधिराज वैश्रवण नामक कुबेर महाराज के लिए हम प्रणाम करते हैं। हम सबका कल्याण हो। हमारा साम्राज्य, भौज्य, स्वराज्य, वैराज्य, पारमेष्ठ्यराज्य, महाराज्य, आधिपत्यमय राज्य समन्तपर्यायी राज्य समुद्र तक बढ़े। हमारा स्वराज्य सर्व भूमण्डल पर फैले ! हमें पूर्ण आयुष्य प्राप्त हो !! अनन्तकाल तक सब पृथ्वीपर हमारा एकछत्र राज्य हो !!!

तदनंतर यह भी श्लोक गाया है—सब देव एवं चारों ओर बैठने वाले मरुत् ये इच्छित मनोरथ पूर्ण किये हुए अविक्षितकुल में उत्पन्न मरुत् के घर में सभासद थे। ज्ञात नारायण वासुदेव के लिए हम ध्यान करते हैं, वह विष्णु हमें सत्कर्म की प्रेरणा करे।'

५—वें मन्त्र का अर्थ—'जो निश्चय से अमृत से भरी हुई ब्रह्मनगरी को जानता है; उसे ब्रह्म और ब्रह्मा से उत्पन्न हुए अन्य देव नेत्र; प्राण और संतान देते हैं।'
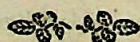
अ.भा. श्रीरविधाम-शाखा ३ परदेशीपुरा इंदौर

अध्यक्ष—श्री देवकली मास्टर साहेब

उपाध्यक्ष—श्री विश्वेश्वरप्रसादजी

मंत्री—श्री द्वारकाप्रसादजी

कोषाध्यक्ष—श्री कन्हैयालालजी दुबे

सदस्य—१ श्री दुर्गाप्रसादजी

,, —२ श्री गोपीनाथजी वर्मा

अ. भा. श्रीरविधाम-शाखा ४ जूनी इन्दौर

अध्यक्ष— श्री डा. उदयभानुजी

उपाध्यक्ष— ,, नारायणप्रसाद शुक्ला

मंत्री— ,, घनश्याम व्यास

प्रचारमंत्री— ,, सुधाकर अमृत

सदस्य—१ ,, देवेन्द्रकुमार रावल

,, —२ ,, लक्ष्मीनारायण दुबे

,, —३ ,, यशवंतराव जोशी

,, —४ ,, कृष्णाजी पतकी

कोषाध्यक्ष—,, सूर्यनारायण पण्ड्या

हमारे प्रकाश

२०१) श्रीमती केन्द्रकार्यकर्त्री श्यामाबाई की

१ गुप्त गणपति-परिचय

२ सक्रिय-संध्या-साधन

३ ईशविज्ञानसुधा

४ सत्यनारायणकथा-रहस्य

५ वेदमार्ग एवं अथर्ववेद का एक सूक्त ,, २५

७ सामूहिक प्रार्थना एवं सर्वदेवता आरती ,, ६

८ सर्वधर्म साधना चित्र ,, १२

९ प्रभात-प्रबोध ,, ३

१० मानव मात्र की प्रार्थना एवं प्रभात प्रबोध ,, २५

११ वेदार्थदर्शन का नमूना ,, ६

१२ नास्तिक-आस्तिक-विज्ञान ,, २०

१३ वैदिक राष्ट्रगीत ,, ३

१४ वैदिक गोगीत ,, ३

१५ श्रीरविधाम-उद्देश्य ,, १२

१६ चारों वेदों के चार सूक्त ,, ५०

—: प्राप्ति स्थान :—

श्री रणछोड़-प्रकाशन-मंदिर महिदपुर (म. प्र.)